हिंदी का विश्व-संदर्भ

कामिल बुल्के के लिए भारत अपनी मातृभूमि से कहीं ज्यादा प्यारा था। बेल्जियम के वेस्टफ्लैडर्स प्रांत के एक गांव रांपस में 1 सितम्बर, 1909 को पैदा हुए। इस कड़ी में सबसे पहला नाम आता है फादर कामिल बुल्के का। उन्होंने रोम के ग्रिगेरियन विश्वविद्यालय से सन् 1932 में दर्शन शास्त्र में एम.ए किया। उन्होंने सन् 1950 में रामकथा पर पीएच.डी की डिग्री हासिल की। जो बाद में रामकथा उत्पति और विकास के नाम से प्रकाशित हुई। इसके बाद जीविका के लिए उन्होंने अध्यापन का व्यवसाय चुना और आजीवन वे रांची के सेंट जेवियर्स कॉलेज में हिंदी पढ़ाते रहे। मौत के समय भी वे हिंदी अध्यापक की भूमिका निभा रहे थे। उनकी सबसे विख्यात पुस्तक 'अंग्रेजी-हिंदी शब्दकोश' है जो सन् 1968 में प्रकाशित हुई थी। यहीं उनका भारतीय दर्शन से परिचय हुआ, और उन्होंने भारत आने का निश्चय किया। सन् 1935 में उन्होंने भारत की धरती पर कदम रखा तो मानो उनकी मुराद ही पूरी हो गई। यहाँ तुलसी साहित्य से उनका परिचय हुआ। लेकिन उसे समझने के लिए हिंदी सीखना जरूरी था। लिहाजा सन् 1936 में उन्होंने हिंदी सीखना आरंभ किया। हिंदी के प्रति इस प्यार ने उन्हें संस्कृत से भी जोड़ दिया और बुल्के ने सन् 1945 में कलकत्ता विश्वविद्यालय से संस्कृत की डिग्री हासिल की। इसके बाद आगे की पढ़ाई के लिए उन्होंने इलाहाबाद का रूख किया और सन् 1947 में यहाँ से एम.ए और सन् 1949 में एम.फिल की डिग्री हासिल की। सन् 1939 से लेकर 1942 के बीच वे धर्मशास्त्र का भी अध्ययन करते रहे। धर्मशास्त्र संस्कृत एवं हिंदी के अध्ययन ने उन्हें हिंदी भाषा पर जबरदस्त पकड़ हासिल कराया। 17 अगस्त 1982 को उनकी मौत के बाद तत्कालीन हिंदी सेवी सांसद शंकर दयाल सिंह ने कहा था, 'जब कभी हिंदी के बारे में कोई संयत विचार होगा, चाहे वह विश्व हिंदी सम्मेलन के मंच पर हो या केंद्रीय समिति की बैठक में अथवा किसी सभा-समिति में सभी को बस एक चेहरा याद आएगा- **फादर कामिल बुल्के** का। जब भी हमें हिंदी-अंग्रेजी शब्दकोश की याद आती है, तो हमारी जबान पर सबसे पहला नाम फादर कामिल बुल्के के शब्दकोश का ही आता है। **उपेन्द्र**

Scanned with CamScanner

कुमार शुक्ल के अनुसार, 'हिंदी हमारे लिए केवल भाषा ही नहीं, माँ का दूध है। कुछ इसी प्रकार उन कई विदेशी विद्वानों ने भी हिंदी से वैसा ही प्यार किया जैसे कोई बेटा अपनी माँ से करता है। आपने 'नील-पक्षी' के नाम से बाइबिल का हिंदी में अनुवाद किया साथ ही सन् 1950 में भारत की नागरिकता ग्रहण की। हिंदी के प्रति उनके कार्य को भारत सरकार ने मान्यता दी जिसके चलते उन्हें 1972 से 1977 तक केंद्रीय हिंदी समिति का सदस्य बनाया। सन् 1973 में बेल्जियम सरकार ने भी अपने इस पूर्व नागरिक को अपनी रॉयल अकादमी का फैलो बनाकर सम्मानित किया।

विदेशी धरती पर हिंदी की सेवा करने वाले सितारों में रूस के पी.ए. वारान्निकोव और जर्मनी के लोठार लुत्से का नाम भी सम्मान के साथ लिया जाता है। लोठार लुत्से भारत में जर्मनी के सांस्कृतिक केंद्र मैक्समूलर केंद्र के निदेशक रहें हैं। उनकी पत्नी बारबरा लुत्से भी नब्बे के दशक के अखबारी दिनों में मैक्समूलर केंद्र की निदेशिका रही। लोठार लुत्से ने हिंदी के कई कवियों की कविताओं का अनुवाद जर्मन भाषा में किया जिनमें मुख्य रूप से विष्णु खरे और वाजपेयी की कविताओं की अनुदित कृतियाँ प्रमुख हैं। रूस के पी.ए. वारान्निकोव ने रामायण का रूसी भाषा में अनुवाद किया। मॉस्को विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाते समय वारान्निकोव हिंदी समाचार पत्रों के लिए समय-समय पर लेख भी लिखते रहे। बाजारवाद के इस दौर में अंग्रेजियत के खिलाफ खड़े होने के लिए हमें यही हिंदी सेवी हमेशा प्रेरित करते रहेंगे।

हिंदी भाषा का विकास–हिंदी विश्व के देशों में भारतीय संस्कृति को जिंदा रखने के लिए मातृभाषा या मूल भाषा ही नहीं, प्राण भाषा भी है। सूरीनाम देश के हिंदुस्तानी आजादी से पूर्व तक भारतवर्ष के राष्ट्रीय गान को अपना गीत माने हुए थे और किसी भी कार्यक्रम की समाप्ति के बाद उसे ही गाते थे। हिंदी, विश्वभर में बस रहे भारतवासियों की सांस्कृतिक भाषा है, जिसकी लंबी ऐतिहासिक परंपरा है और यही 'हिंदी भाषा' की शक्ति है जो कई बोलियों के रूप में विश्व में विकसित हो रही है। हिंदी ही वह शक्ति है जो विश्वभर में हो रहे भारतीयों को संस्कृति के आधार पर जोड़ सकती है और 'विश्व हिंदी सम्मेलन' के आयोजनों की यही सार्थकता है कि हिंदी की और विश्व भर में जड़े फैले और दूसरी ओर शाखा-दर-शाखा विकास हो जिससे यह एक महावृक्ष बन सके। सूरीनाम में हिंदी भाषा के दो रूप दिखाई देते है- 'हिंदुस्तानी और सरनामी।' हिंदी भाषा ने सूरीनाम में हिंदुस्तानी संस्कृति की रक्षा की। दिनभर की कठोर मजदूरी के बाद साँझ के भजन-कीर्तन और लोक-गीतों में बची रही भाषा

ने बचाए रखे संस्कार और संस्कारों ने बचाई रखी भाषा। दक्षिण अमेरिका और कैरीबियाई देशों में सूरीनाम देश इसी कारण से भारतीयता का ज्योति स्तंभ बना हुआ है।

क्रियोल (नीग्रो) लोगों को स्रनाँग तोगो तथा डच भाषा का स्कूल में शिक्षण दिया जाता था। भारतवंशी लोग प्राय: ऐसे शिक्षण से (1873 से दस वर्षो तक) वंचित रहे, क्योंकि वे गाँव-देहात में रहते थे और क्रियोल लोग पारामारिबो में रहते थे। धीरे-धीरे जब भारतवासियों पर शर्तबंदी प्रथा का प्रकोप कम हुआ और जमीन मिलने पर सूरीनाम में ही रहने का निर्णय किया, तब उन्होंने अपनी भाषा की पढ़ाई धीरे-धीरे जारी रखी। जिन्हे कुली स्कूल के नाम से जाना गया और वे सिर्फ गाँव-देहात में खुले हुए थे। सर्वप्रथम कुली स्कूल की स्थापना 1890 में कमोबैइना मरियम वर्ख प्लांटेशन में हुई।

सूरीनाम के हिंदुस्तानी की बोली-बातचीत, खानपान, संस्कार, धर्म, शादी-ब्याह, हवन-यज्ञ, मंदिर-मस्जिद कामकाज के आधार पर बोली जाने वाली बोली में संत तुलसीदास और कबीरदास की भाषा और भाव-संस्कार दिखाई देते है। दशहरा से पहले एक माह तक खेलीजाने वाली खुले में रामलीला नाटक की पद्धति काशी के रामनगर की रामलीला से हू-ब-हू मिलती है। हिंदी- भारत में जिसे हम हिंदी या मानक हिंदी के नाम से पहचानते है। सूरीनाम के भारतवासियों द्वारा प्राय: इसका प्रयोग नहीं होता है। इसका प्रयोग विशेष स्थितियों एवं अवसरों पर किया जाता है। लेकिन सरकारी स्कूलों में हिंदी भाषा नहीं पढ़ाई जाती है। इसके अतिरिक्त इस देश में न तो हिंदी भाषा में कोई पत्रिका प्रकाशित होती है और न ही अख़बार। हिंदी भाषा की पुस्तकों का कोई प्रकाशन नहीं होता है। भारतीय मजदूर किसानों के साथ आई कहानियों किस्से और लोकगीत ही हिंदी साहित्य की ख्याति थी, जो वाचिक परंपरा से चलती रही। 1970 से 1985 के बीच प्रसिद्ध सामाजिक नाटक 'दूसरी बीबी', 'आजकल और आज', 'हाय रे पैसा', 'बहू भी बेटी है', 'मैं औरत हूँ', 'सैनिक के पिता', 'प्रवासी', 'कृष्ण और सुदामा प्रवासी', 'रक्षाबंधन' आदि लिखे गए और अनेकानेक बार मंचित हुए। हिंदस्तानी बोली और हिंदी भाषा के मिले-जुले स्वरूप ने जन-मन को बहुत आकर्षक किया, जिन्हें पुस्तक के रूप में जनता तक पहुँचाया गया।- Raghoebir, Ramdev joneel in suriname-1985-1940 के बाद आर्य समाज, सारामाका के हिंदी कार्यकर्ताओं द्वारा साइक्लोस्टाइल पर्चे, वितरित किए जाते थे और 1945-46 से उसी तरह की पत्रिकाएँ प्रकाशित की गई, जिसमें भजन, कविता और एक पृष्ठ के लेख का ही चलन था। सूरीनाम देश की आजादी के बाद

Scanned with CamScanner

निबंध एवं आलेख लिखने में प्रगति हुई। 'सरस्वती' नाम से एक प्रकाशन ने 2000 से कुछ कार्य प्रारंभ किया था लेकिन वह इतना अधिक व्ययपूर्ण है कि किसी लेखक द्वारा साधना सहज नहीं हैं। सूरीनाम में हिंदी की पढ़ाई लिखाई विशेष रूप से धार्मिक संस्थानों द्वारा की जाती थी। सूरीनाम देश में आधुनिक साधनों के साथ वैज्ञानिक तरीकों से हिंदी शिक्षण और प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए और इसके बाद 'सूरीनाम हिंदी परिषद' की नियमावली के लिए एक 'निर्मात्री समिति' का गठन किया गया जिसके संयोजक **श्री शिवनारायण कालका** बनाए गए, उस समय 'सूरीनाम हिंदी परिषद' की तीन समितियाँ बनी थी–

1. संस्थापक समिति (सदस्य संख्या 25)
2. परामर्शदात्री समिति (सदस्य संख्या 11)
3. प्रबंध समिति (सदस्य संख्या 9)

1. **राष्ट्रभाषा समन्वय समिति**–इस समिति का कार्य सूरीनाम में सभी भाषा समूहों द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं को मातृभाषा के रूप में सरकारी मान्यता दिलाने तथा सभी सरकारी स्कूलों में उन भाषाओं का गौण भाषा के रूप में पढ़ाए जाने की व्यवस्था कराए जाने का प्रयास करना था। समिति ने यहाँ के सभी भाषा समुदायों के प्रतिनिधियों की ओर से भूतपूर्व राष्ट्रपति को इस बारे में एक आवेदन पत्र प्रस्तुत किया गया था।

2. **सूरीनाम भारत मातृ संघ**–'सूरीनाम हिंदी परिषद' की परामर्शदात्री समिति के अध्यक्ष डॉ. हंसदेव ज्ञान अधीन सूरीनाम हिंदी परिषद की ओर से सूरीनाम के संसद सदस्यों के उस दल में शामिल थे जो 1978 में भारत दर्शन के लिए गया था। उन्होंने भारत को साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं के साथ संपर्क स्थापित कर भारत के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित करने में योग दिया।

3. **जगन्नाथ लक्ष्मण प्रतिष्ठान निधि**-भारतवंशियों के शिरोमणि और सूरीनाम के साथ नेता श्री जगन्नाथ लक्ष्मण के सम्मान में इस निधि की स्थापना हुई थी।

हेईनार पोल्डर में **श्रीमति बलवंत सूरसती** हिंदी पढ़ाती है। पारारदेईस में श्री रामपाल और कहैई हैं। हाफ़्तनकूर्त में पंडित शंकर ठाकुरदत्त पढ़ाते हैं। निवनिकेरी के पंडित शिवगोविंद मंदिर के स्कूल के अलावा अनाथालय के बच्चों को भी हिंदी पढ़ाते हैं। श्रीमान बालक भी निवनिकेरी में 1992 से हिंदी शिक्षा देते हुए हिंदी पुस्तकालय की देखभाल कर रहे हैं। निवनिकेरी में ही श्रीमति तारा बदलू भी 1992 से एक हिंदी स्कूल सफलतापूर्वक चला रही हैं। इसी तरह

सुशीला बीरबल भी प्राणपण से वहाँ हिंदी प्रशिक्षण के कार्य में लगी हुई है।

सूरीनाम में हिंदी भाषा निकेरियों द्वारा जीवित है। सूरीनामी हिंदुस्तानी अपने पुत्रों का विवाह निकेरी की कन्याओं से करने के पक्षधर रहे हैं। सूरीनाम देश में हिंदी और हिंदुस्तानी संस्कृति निकेरी की नारियों के कारण स्थापित और जीवित है। सूरीनाम देश के हिंदुस्तानियों के कुल प्रतिशत का पचास प्रतिशत निकेरी का निवासी है। यहाँ की हिंदी भाषा पर रामचरितमानस की भाषा का लालित्यपूर्ण प्रभुत्व है। सूरीनाम हिंदी परिषद के गठन के बाद और भारतीय दूतावास के सहयोग से हिंदी-भाषा शिक्षण में प्रगति हुई।

विश्व के पश्चिमी गोलार्द्ध दक्षिण अमेरिका के शीर्ष पर सूरीनाम देश आभूषण की तरह स्थित है। सूरीनाम देश का अधिकांश हिस्सा अटलांटिक महासागर की तटौना भूमि ब्राजील के महानद अमज़ेन के डेल्टा से बनी हुई है। जल की दृष्टि से विश्व का यह छठा महत्वपूर्ण देश है।

सन् 1873 ई. सन् 1916 ई. के बीच सूरीनाम पहुँचे हुए आप्रवासी भारतीयों के श्रम द्वारा अन्वेषित और सृजित सौंदर्यशाली देश है। यूरोपीय पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र है। इस देश में सोलह मातृभाषाएँ बोली जाती है, इसलिए इसे 'भाषा का म्यूजियम' देश भी कहते हैं।

सूरीनाम की धरती पर भारतीय मजदूर धान की फसल की तरह उगे और अपने श्रम से सत्ताधारियों के कुठलों (अनाज रखने का मिटटी का बना बड़ा बर्तन) को सोने से भर दिया। मजदूर के पास लिखने के लिए कागज भी नहीं था। इनकी भाषा को दबाया गया। 'कुली', 'कुत्ता', 'कलकतिया' की भाषा कहकर अपमानजनक ढंग से संबोधित किया गया। इन्होंने अपनी भाषा को अपने प्राण देकर जीवित रखा। सूरीनाम के भारतवासियों का दाहिना हाथ यदि सरनामी भाषा है तो बांया हाथ हिंदी है। सरनामी सूरीनामी हिंदुस्तानियों की धर्म, संस्कृति और जीवन की भाषा है। यह अपने आप में विलक्षण और अनोखी भाषा है। एक ओर तुलसीदास की भाषा की तरह बहता हुआ नीर है, तो दूसरी ओर कबीर की निर्गुणिया की खनक है, और विद्यापति की 'पदावली' की-सी मिठास है। सरनामी भाषा से पूर्व भारत से सीधे पहुँचे हुए मुंशी रहमान खान है, जिन्होंने कबीर की तर्ज पर दोहे लिखे। कथा, लोककथा और गद्य लिखा। कबीर की ही तर्ज पर महोदव खुनखुन ने विपुल दोहे लिखकर समाज की विसंगतियों को उजागर किया। श्री चंद्रमोहन, रंजित सिंह, रामदेव रघुवीर, हरिदेव सहतू, सुशीला बलदेव, तेज प्रसाद खेदू, तारा बदलू जैसे अनेक समाज-सेवी कवि है, जिन्होंने इस बहुसंस्कृतिशाली देश में हिंदुस्तानियों को संगठित रखने के लिए हिंदुस्तानी

Scanned with CamScanner

संस्कृति और धर्म-कर्म बचाए रखने के लिए साहित्य रचा। जानकी प्रसाद सिंह, शांता सिंह सूरीनाम हिंदी परिषद के माध्यम से सन् 1975 ई. से हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार-प्रसार में लगे हुए हैं। वार्षिक परीक्षाएँ आयोजित होती हैं। प्रतिवर्ष पाँच सौ से अधिक विद्यार्थी वर्धा और परिषद की संयोजित परीक्षाओं में हिस्सा लेते हैं। घनघोर अंधेरे की तुफानी रातों में भी अपने संस्कार और हिंदी भाषा के दीपक को अपने रक्त का तेल पिलाकर और अपनी हथेलियों की आड़ में तुलसी और कबीर की वाणी की लौ को प्रज्ज्वलित किए रखा।

विश्व के अन्य देशों में भारतीय संस्कृति को जीवित रखने के लिए हिंदी मात्र मातृभाषा या मूल भाषा ही नहीं, प्राण भाषा भी है।

मॉरीशस, फिजी, ट्रिनीडाड, गयाना और सूरीनाम ऐसे ही देश है। इस समय यहाँ भारतीयों की संख्या पैतींस हजार है, ट्रिनीडाड और ब्रिटिश गयाना के प्रवासी भारतीयों की तरह यहाँ के भारतवासियों की उन्नति न होने का कारण यही है कि यहाँ के हिंदुस्तानियों की संख्या अधिक नहीं हैं। 'मारवाड़ी एसोसिएशन अगस्त सन् 1915 में भारत सरकार को इंडियन ऐमीग्रेशन एक्ट को सुधारने के लिए जोर दिया और मि. मैकनील और चिमनलाल की रिपोर्ट के बूरे प्रभाव को दूर करने और 'कलकता में पं. अंबिका प्रसाद वाजपेयी, बाबू देवी प्रसाद खेतान, डॉ. टंडन आदि महानुभवों के उद्योग से 'एण्टी इंडेन्चर्ड लेबर लीग' बनी। श्री रायबहादुर के इस आलेख से प्रवासी भारतीयों के कष्ट मुक्ति के संघर्ष की गाथा उजागर होती है।

सन् 1919 में क्लोनियल काँग्रेस ऑफ एजुकेशन का गठन हुआ। कुली स्कूल के साथ-साथ पब्लिक स्कूल, रोमन कैथलिक स्कूल, मारीचेवना चर्च फाउंडेशन जैसी संस्थाओं के द्वारा स्कूल खोले गए। शिक्षाविद् जयकॉब्स का मानना था कि अपने देश को छोड़कर आए हिंदुस्तानियों को हमें धन्यवाद देना चाहिए कि ये हमारे यहां मजदूरी कर रहें, इसलिए इन्हें इनकी भाषा सिखानी चाहिए। जिला स्तर पर भी स्कूल खोलना चाहिए। इन्हें हिंदी भाषा के साथ-साथ गणित और डच भाषा भी आनी चाहिए। इन्हें 'डच संस्कृति' की भी शिक्षा देनी चाहिए। इसलिए इन्हें सावधानीपूर्वक प्रेम से पढ़ाना चाहिए जिससे वे भाग न जाए। 75% यह अविकसित और असभ्य है, इसलिए वे किसी भी तरह का रूख अपना सकते हैं। इन्हें सभ्य बनाने के लिए प्राइवेट ईसाई (क्रिश्चियन) स्कूल में आगे की शिक्षा देनी चाहिए क्योंकि मानवता के विकास के लिए धर्म बहुत आवश्यक है, लेकिन इसे कुली और पब्लिक स्कूल में नहीं पढ़ाया जा सकता है। मारीचेबना चर्च फाउंडेशन, पब्लिक स्कूल और प्राइवेट स्कूल समान थे। ऐसे में, उस समय

कुली बच्चों (भारतवंशी बच्चों) को डच, जावानीज़ और हिंदी तीन भाषाएँ सीखनी पड़ी, क्योंकि डच भाषा सीखकर ही वे मिशनरी में ईसाई धर्म सीख सकेंगे। उस समय के शिक्षा विभाग में काम करने वाले क्रियोल पुरूष प्लेट (Plat) का मानना था कि बच्चों की शक्ति का सम्मान करते हुए उन्हें नए कपड़े और अच्छा भोजन देना चाहिए। 'भारत-उदय' संस्था के लोगों ने भी अपनी अपील में कहा है कि भारतीयों को अपनी सभ्यता-संस्कृति भी धारण करनी चाहिए, लेकिन इसके साथ-साथ उन्हें नई भाषा भी सीखनी चाहिए, क्योंकि सूरीनाम देश को उन्होंने पितृदेश के रूप में स्वीकार किया है इसलिए उन्हें हिंदुस्तानी और डच दोनों भाषाएँ आनी चाहिए। सूरीनाम में उस समय एक यूरोपीय महिला थी जिसका नाम हॉवर्ड स्नैइदर्स (Hard sneders) है। आज इन्हीं के नाम से एक मार्ग हैं। उसने भारतीय मजदूरों के साथ अत्याचारों के संदर्भ में आवाज बुलंद की और महाराज के वक्तव्य पर घोर आपत्ति उठाई। उस समय श्री बाबू लक्ष्मण सिंह जी समिति के सभापति थे। इन्ही दोनों ने मिलकर हिंदुस्तान में सच्चाई को उद्घाटित करते हुए रिपोर्ट भेजी। पूरी दुनिया में शर्तबंदी प्रथा के समाप्त होने के बाद अप्रवासी भारतीय नए वातावरण में अपनी भाषा और संस्कृति की पहचान के साथ दूसरों के बीच जीना चाहते थे। उदाहरणस्वरूप दक्षिण अफ्रीका, जामाइका, गयाना और ट्रिनीडाड के अप्रवासी, भारतीय मजदूरों ने अंग्रेजी को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बना लिया, लेकिन मॉरीशस और फिजी में फ्रेंच और अंग्रेजी की जगह भारतीयों ने अपनी तरह से हिंदुस्तानी को रचा। सूरीनामी में ही हिंदुस्तानी की सरनामी भाषा का स्रोत है। निकेरी की हिंदुस्तानी को 'निकेरी' कहा गया और शेष सूरीनामी के भारतीयों और भारवासियों की भाषा को सरनामी पुकारा गया।

Scanned with CamScanner

संयुक्त राष्ट्र में हिंदी

भारत से बहुत दूर मॉरिशस एक देश है, जहाँ की बहुसंख्यक जनता में हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार तथा विकास काफी उच्च स्तर तक पहुँचा है। भारत की हिंदी भाषी जनता ने मॉरिशस के हिंदी भाषा और साहित्य को कई दशक पहले ही अपने साहित्यिक क्षितिज का हिस्सा बना लिया था। मॉरिशस की बहुसंख्यक हिंदू जनता भारतीय मूल की है, जिसका शोषण एवं त्रासदियों से भरा दुखद इतिहास है। इसे मॉरिशस के प्रसिद्ध लेखक अभिमन्यु ने 'चीत्कारों से भरा गूँगा इतिहास' कहा है, जो तब से आरंभ होता है, जब कलकत्ता, मद्रास आदि बंदरगाहों से भोले-भाले लोगों को गिरमिटिया (एग्रीमेंट का विकृत रूप) मजदूरों के रूप में जहाजों में भेड़-बकरियों की तरह भर-भरकर भेजा गया और उन्हें छल-कपटपूर्ण संभावनाओं के रूप में उनसे कहा गया कि पत्थरों को उठाने पर उनके नीचे उन्हें सोना मिलेगा।

भारत में मॉरिशस जाते हुए इन जहाजों में नारकीय परिस्थितियों के कारण सैकड़ों भारतीय मारे गये और जो निर्जीव से, अधमरे-से मॉरिशस पहुँचे, उन्हें उससे भी अधिक भयंकर अमानवीय परिस्थितियों में जीवित रहना पड़ा। उनकी इस अदम्य जिजीविषा और भयंकर परिस्थितियों में जीवित रहने की दृढ़ता के मूल में इनका भाषा, धर्म और संस्कृति-प्रेम था और रामायण, रामचरितमानस, महाभारत, गीता, हनुमान-चालीसा, आल्हा जैसी पुस्तकें भी थी, जो इनके सुख-दुख में, दासता और विवशता में, पर्व और त्यौहारों में इनका साथ देती थी और ये भोजपुरी और हिंदी भाषा से अपनी एक भारतीय दुनिया बनाए रखते थे। ये भोजपुरी और हिंदी भाषाएँ एक-दूसरे का दुख बाँटने, एक-दूसरे से जुड़ने, धर्म-ग्रंथों की कथाएं सुनने और धर्म-संस्कृति से जुड़े रहने की भाषाएँ थी। इस प्रकार इन भाषाओं ने मॉरिशस में प्रवासी मजदूरों को एक समाज के रूप में संगठित रखा और उन्हें एकजुट होकर अपनी भाषा, संस्कृति, धर्म आदि को जीवित रखने की भी शक्ति प्रदान की। सन् 1871 नें भारतीय मजदूरों की ओर से आदोल्फ-द-प्लेवित्ज ने एक याचिका तैयार की, जो अंग्रेजी के साथ तमिल तथा 'हिंदुस्तानी' में भी तैयार की गई थी। यह पहला अवसर था जब 'हिंदुस्तानी'

भाषा में हिंदुस्तानियों की वकालत की गई थी। सन् 1859 में मॉरिशस में हिंदू-मंदिरों का निर्माण शुरू हो गया था और उनमें भजन-कीर्तन के साथ हिंदी की भी पढ़ाई होती थी। इसी प्रकार भारतीय मजदूर रात को बैठकों में बैठते, सुख-दुख बाँटते और अपनी भाषा, संस्कृति और धर्म को बचाए रखने के बारे में सोचते। इन बैठकों में भोजपुरी में लोक-गीत भी गाये जाते थे और इसी समय इन प्रवासियों की व्यथा-कहानी कहने वाले कुछ नये भोजपुरी लोक-गीत भी रचे गये। दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटते समय महात्मा गाँधी 29, अक्टूबर, 1901 को मॉरिशस पहुँचे और उन्होंने खड़ी बोली हिंदी में अपने भाषण दिये तो गोरों की दृष्टि में इस 'जंगली भाषा' को गौरव, साहस और स्वाभिमान मिला था तथा भोजपुरी को भी हिंदी की ओर मुड़ने तथा सहयोग करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। कुछ समय बाद महात्मा गाँधी ने मणिलाल मगनलाल डॉक्टर को प्रवासी भारतीयों के बीच काम करने के लिए मॉरिशस भेजा और वे बर्मा से 11, अक्टूबर, 1907 को मॉरिशस पहुँचे। मणिलाल ने अपने भाषणों में हिंदी का प्रयोग किया तथा सन् 1909 में 'हिंदुस्तानी' पत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया। इसके एक वर्ष के बाद सन् 1910 में मॉरिशस में आर्यसमाज की स्थापना हुई और इस संस्था ने हिंदी के प्रचार-प्रसार तथा शिक्षण के लिए ऐतिहासिक महत्व का कार्य किया।

आर्यसमाज के साथ सनातन धर्म के प्रचारकों, आर्य परोपकारिणी सभा (1925), 'आर्य प्रतिनिधि सभा' (1925), 'आर्य कुमार सभा' (1925), 'आर्य रविवेद प्रचारिणी सभा (1930), 'हिंदू महासभा' (1925) आदि संस्थाओं ने भी हिंदी तथा हिंदू-धर्म और संस्कृति की धारा को प्रवाहित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस कार्य में स्वामी मंगलानंद पुरी, डॉ. चिरंजीव भारद्वाज तथा उनकी पत्नी सुमंगला देवी, पं. आत्माराम विश्वनाथ, स्वामी स्वतन्त्रानंद, पं. काशीनाथ किश्तो, पं. रामअवध शर्मा, कुँवर महाराज सिंह, मेहता जैमिनी, स्वामी विज्ञानानंद, बेनीमाधो सुतीराम, श्री नृहसिंह दास आदि अनेक व्यक्तियों ने भी हिंदी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

सन् 1935 तक 'हिंदुस्तानी' (1909), 'मॉरिशस आर्य पत्रिका' (1911), 'आर्यवीर' (1929), 'ओरियण्टल गजट' (1912), 'मॉरिशस मित्र' (1924), 'सनात: धर्मांक' (1933) आदि पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुई तथा इन पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानियाँ आदि के छपने से हिंदी साहित्य का विकास हुआ हिंदी भाषा का साहित्यिक रूप निर्मित होने लगा। जनवरी, 1935 में हस्तलिखित मासिक पत्रिका 'दुर्गा' का शुभारंभ हुआ, जो सन् 1938 तक नियमित निकलती रही। यह मॉरिशस की हिंदी पत्रकारिता एवं हिंदी भाषा तथा साहित्य के विकास

Scanned with CamScanner

के लिए एक नयी क्रांति थी। 'दुर्गा' के इस महत्व का मूल्यांकन अभी होना है। इसके संपादक सूर्यप्रसाद मंगर का योगदान पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसा ही है।

मॉरिशस के हिंदी भाषा और साहित्य के इतिहास में सन् 1935 से 1968 तक (स्वतन्त्रता पूर्व तक) पूर्व संस्थाओं के साथ कुछ नयी संस्थाओं- 'हिंदी प्रचारिणी सभा' (1935) आदि ने भी हिंदी भाषा और साहित्य के विकास एवं प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय योगदान दिया है तथा सूर्यप्रसाद मंगर भगत, पं. उमाशंकर गिरजानन, पं. श्रीनिवास जगदत्त, नेम नारायण 'गुरूजी', जयनारायण राय, मोहनलाल मोहित, भगतबंधु, डॉ. शिवसागर रामगुलाम, प्रो. वासुदेव विष्णुदयाल, सोमदत्त बखोरी, प्रो. रामप्रकाश आदि कुछ हिंदी-प्रेमियों ने भी इस क्षेत्र में ऐतिहासिक महत्व का कार्य किया। इसी काल में रेडियों तथा टेलिविजन का भी श्री गणेश हुआ और हिंदी कार्यक्रमों का प्रसारण आरंभ किया गया। इन्हीं दिनों भारत से यशपाल जैन, रामधारी सिंह 'दिनकर', डॉ. शिमंगल सिंह 'सुमन', आदि साहित्यकार मॉरिशस गये और इससे भी वहाँ की नयी पीढ़ी को प्रेरणा मिली और इसी समय अभिमन्यु अनत जैसे प्रतिभा-संपन्न लेखक का आर्विभाव हुआ। सन् 1970 में मोका शहर में 'महात्मा गांधी संस्थान' की स्थापना हुई और हिंदी भाषा एवं साहित्य, भोजपुरी भाषा, भारतीय कला तथा संगीत के विकास के नये क्षितिज खुले।

मॉरिशस में हिंदी के इस विकास के बावजूद फ्रेंच और अंग्रेजी का प्रलोभन बढ़ रहा है तथा इन भाषाओं के समर्थक भी हिंदी को दुर्बल करने के लिए कुचक्रों में लगे हैं, यहः का हिंदी समाज समझता है कि यदि हिंदी भाषा लुप्त हो गई तो धर्म-संस्कृति को बचाना भी संभव न होगा। मॉरिशस में दो 'विश्व हिंदी सम्मेलन' होने पर भी हिंदी अपने अधिकार प्राप्त करने के लिए संघर्षशील है और इसके लिए 'हिंदी अध्यापक संघ', 'आर्यसमाज', 'सनातन धर्म', 'हिंदी प्रचारिणी सभा', 'हिंदी लेखक संघ', 'मॉरिशस साहित्य अकादमी', 'हिंदू यूनियन' आदि अनेक संस्थाएं अपनी-अपनी ओर से प्रयत्नशील हैं। भारत और मॉरिशस के सांस्कृतिक, साहित्यिक, धार्मिक, आर्थिक आदि संबंधों के स्थायित्व के लिए भी वहाँ हिंदी भाषा और साहित्य का निरंतर फलना-फूलना आवश्यक है।

मॉरिशस में हिंदी भाषा की अस्तित्व रक्षा के लिए जैसी व्याकुलता और तत्परता दिखाई देती हैं, फिर भी मॉरिशस में हिंदी भाषा बोल-चाल की भाषा नहीं है। अत: यह समझना आसान है कि किस संकल्प और प्रतिबद्धता के साथ ये लेखक हिंदी में कविता, उपन्यास, कहानी, नाटक आदि विभिन्न विधाओं में

सर्जनात्मक लेखन कर रहे हैं। मॉरिशस के इन हिंदी लेखकों को कविता-लेखन सबसे अधिक प्रिय रहा है और अब तक लगभग 110 कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

मॉरिशस की हिंदी कहानी के उद्‌भव और विकास के इतिहास को मॉरिशस और भारत कुछ इतिहास लेखकों तथा मॉरिशस के कथा-साहित्य (साहित्य पर भी) पर शोध करने वाले विद्वानों ने रेखांकित करने का प्रयास किया है। मॉरिशस के प्रसिद्ध हिंदी कवि सोमदत्त बखोरी ने 'हिंदी साहित्य का परिचय' नामक हिंदी साहित्य का इतिहास लिखा तो डॉ. लक्ष्मी प्रसाद रामयाद ने अपने अंग्रेजी शोध-प्रबंध-दि एस्टिब्लिशमेंट एण्ड कल्टीवेशन ऑफ मॉडर्न स्टैण्डर्ड हिंदी इन मॉरिशस' (1985) में मॉरिशस की हिंदी कहानी के आरंभिक काल से सन् 1978 तक के उद्‌भव और विकास का बड़ा वैज्ञानिक विश्लेषण किया है। मॉरिशस के ही दो शोधार्थियों ने भी अपने-अपने शोध-ग्रंथों में मॉरिशस की हिंदी कहानियों का विवेचन किया है। एक हैं- डॉ. मोहनलाल हरदयाल, जिन्होंने सन् 1980 में उज्जैन विश्वविद्यालय से 'मॉरिशस की हिंदी और उसका साहित्य' पर पीएच.डी की उपाधि प्राप्त की और दूसरे हैं- डॉ. बीरसेन जागासिंह, जिन्होंने उज्जैन विश्वविद्यालय से ही सन् 1982 में 'हिंदी में मॉरिशस का योगदान' विषय पर .पीएच.डी की उपाधि प्राप्त की। मॉरिशस की हिंदी कहानी के आरंभिक युग में अर्थात् अभिमन्यु अनत लेखन से पूर्व तक, हिंदी कहानी का जन्म ही नहीं हुआ, बल्कि उसने हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा अपने आरंभिक स्वरूप को निर्मित करते हुए अभिमन्यु अनत जैसे कहानीकार के इस क्षेत्र में आने की परिस्थितियां भी निर्मित की। प्रेमचंद के हिंदी कहानी में प्रवेश से पहले यहाँ भी जयशंकर प्रसाद, चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' आदि का कहानी विधा में आगमन हो चुका था और 'सरस्वती', 'इंदु' आदि पत्रिकाएँ हिंदी कहानियों का प्रकाशन कर रही थी। आरंभिक काल की इन कहानियों में प्रमुख रूप से समाज की जड़ताओं, अंधविश्वासों, कुरीतियों और विसंगतियों के उद्‌घाटन के साथ समाज सुधार की प्रवृति विद्यमान है। 'सनातन धर्माक' में प्रकाशित कहानी 'इंदो' में गरीब-अमीर के बीच विवाह की संभावना और समस्याओं, कुरीतियों आदि का चित्रण हुआ है। 'मेरी दादी' कहानी में गोरे मालिकों के भारतीय मजदूरों पर किए जाने वाले अत्याचारों तथा उनकी विवशताओं का मार्मिक चित्रण है। 'आहुतियाँ' में भी भारतीय मजदूरों पर होने वाले अत्याचारों की ही कथा है। इस प्रकार मॉरिशस की हिंदी कहानी के इस आरंभिक काल में लगभग तीस कहानीकारों की लगभग पचास कहानियां प्रकाशित हुई हैं। इनमें सूर्यप्रसाद मंगर भगत, नेम नारायण गुप्त,

Scanned with CamScanner

सोमदत बखोरी तथा डॉ. मुनीश्वरलाल चिंतामणि प्रमुख हैं। इस प्रकार मॉरिशस की हिंदी पत्रकारिता ने हिंदी कहानी के उद्भव में उसी प्रकार महत्वपूर्ण योगदान किया, जैसा योगदान भारत में हिंदी कहानी के उद्भव में दिया था। भारतेंदु हरिशचंद्र के काल में हिंदी कहानी की 27 पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती थी। भारत में ब्रजभाषा काव्य की भाषा थी, परन्तु गद्य और कहानी का उद्भव खड़ीबोली में हुआ। मॉरिशस में भारतीय मजदूरों की भाषा भोजपुरी थी। इस युग के हिंदी कहानीकारों की भाषा का जहाँ तक सवाल है, वह अशुद्धियों तथा व्याकरण की भूलों से परिपूर्ण है, परन्तु इसका स्पष्ट कारण यह है कि इन लेखकों की शिक्षा प्रायः स्कूलों-कॉलेजों में नहीं हुई थी और हिंदी का भी इन्हें विधिवत् तथा व्याकरण-सम्मत ज्ञान नहीं था। इन लेखकों ने हिंदी भाषा तथा देवनागरी लिपि का ज्ञान बैठकों तथा पाठशालाओं की सांध्य कक्षाओं, धर्म प्रचारकों, साधु-संतों आदि से प्राप्त किया था। इस काल में पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी की कहानियाँ सबसे अधिक प्रकाशित हुई। पं. दौलतराम शर्मा के संपादन में प्रकाशित पत्रिका 'अनुराग' में लगभग छः कहानियाँ छपी।

इस प्रकार मॉरिशस की कहानी-यात्रा में 1960-1968 का यह काल अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं के घटित होने के कारण महत्वपूर्ण बन गया है। ये घटनाएं इसलिए महत्वपूर्ण नहीं हैं, क्योंकि ये कहानी के इतिहास में पहली बार घटित हुई, बल्कि इसलिए कि इन्होंने मॉरिशस की हिंदी कहानी को स्थायित्व दिया, उसे व्यापकता दी, उसकी रचना और प्रकाशन को, सामूहिक रूप देकर उसे आंदोलन के रूप में आरंभ किया। इस कालखंड की बहुत बड़ी उपलब्धि थी कि एक युवा कहानीकार ने अपनी आरंभिक कहानियों से ही मॉरिशस की हिंदी कहानी को सागर पार कराकर भारत तक पहुँचा दिया था। मॉरिशस की स्वतंत्रता से मॉरिशस का नूतन युग आरंभ हुआ। साहित्य में भी एक नये युग का आरंभ हुआ। यह मॉरिशस के हिंदी साहित्य का 'आधुनिक काल या विकास काल' है। यह कहानी के उत्थान का पहला चरण था।

मॉरिशस की हिंदी कहानी-यात्रा के इस काल (1968-98) में हिंदी का कहानी का कई रूपों में विकास हुआ- लेकिन सन् 1968 में जब देश स्वतंत्र हो गया तो साहित्य-प्रेमियों के मन में अपने देश, समाज, भाषा, संस्कृति तथा साहित्य के प्रति नया उत्साह उत्पन्न हुआ। स्वतंत्रता के बाद प्रकाशित होने वाली इन हिंदी पत्रिकाओं में लगभग 250 कहानियां प्रकाशित हुई हैं, तथा भारत की हिंदी पत्रिकाओं- 'आजकल', 'कहानी', 'कादम्बिनी', 'धर्मयुग', 'नवनीत', 'सरिता', 'साप्ताहिक हिंदुस्तान', 'सारिका', 'इंद्रप्रस्थ भारती', 'हंस', 'कथादेश',

'शांतिदूत' आदि पत्रिकाओं में केवल अभिमन्यु अनत की ही लगभग पचास कहानियां प्रकाशित हुई है। मॉरिशस की स्वतंत्रता के बाद कहानीकारों की निजी कहानी-संग्रहों के प्रकाशन में तीव्रता आयी। प्रकाशन के मामले में मॉरिशस के लेखक थोड़े संकोची थे, क्योंकि मॉरिशस में भी चूँकि हिंदी पुस्तकों के खरीदार नहीं हैं तथा भारत की तरह हिंदी पुस्तकों की सरकारी खरीद भी नहीं है, इस कारण कहानी आदि की साहित्यिक पुस्तकों के प्रकाशन की संभावनाएं भी कम ही जन्म ले पाती थी।

अभिमन्यु अनत मॉरिशस के सबसे सशक्त कहानीकार है तथा सबसे लंबे समय तक कहानी-रचना में प्रवृत रहनेवालो गिनती के कहानीकारों में से हैं। अनत की पहली कहानी 'टूटी प्रतिमा' मॉरिशस की पत्रिका 'अनुराग' के जुलाई, 1960 के अंक में प्रकाशित हुई थी और इधर उनकी 'धानी का दोस्त' कहानी 'गगनांचल' के जुलाई-सितम्बर, 1999 के अंक में छपी, अपने 35 वर्षों के रचना-काल में वे बराबर कहानियां लिखते रहे हैं। वे एकमात्र ऐसे कहानीकार भी हैं, जिन्होंने सबसे अधिक कहानियां लिखी हैं तथा मॉरिशस के किसी भी दूसरे कहानीकार की तुलना में सबसे अधिक प्रकाशित भी हुई हैं।

मॉरिशस की हिंदी कहानी में भानुमति नागदान लेखिकाओं में सबसे अधिक प्रतिष्ठित हैं। सुनीति अलियार के बाद वे ऐसी महिला कहानीकार हैं, जिनका कहानी-संग्रह छपा है। इनका पहला कहानी संग्रह 'मिनिस्टर' सन् 1981 में प्रकाशित हुआ था। पूजानंद नेमा इस काल के एक सशक्त कहानीकार हैं। यद्यपि सन् 1992 में उनका पहला कहानी संग्रह 'नया सफर सहने' का प्रकाशित हुआ। रामदेव धुरंधर मॉरिशस के एक सशक्त कहानीकार हैं। अभिमन्यु अनत के बाद कहानी में संवदेना और कला की दृष्टि से उनका ही उल्लेख किया जाना चाहिए। धुरंधर ने 100 से अधिक कहानियां लिखीं और सैंकड़ों लघुकथाएं, धुरंधर की कहानियाँ मॉरिशस के संक्रमणशील समाज का दर्पण हैं। डॉ. बीरसेन जागासिंह के दो कहानी संग्रह 'सैलाबों के बीच' (1995) तथा 'त्रिकोण का केंद्र' (1995) प्रकाशित हुए। अभिमन्यु अनत ने लिखा था, 'ये सभी कहानियां कहीं न कहीं उन सामाजिक एवं व्यक्तिगत समस्याओं को उजागर करती हैं, जो मॉरिशस की काल-परिस्थिति के अनुसार सटीक होते हुए व्यक्तिगत संबंधों एवं मूल्यों को सार्वभौमिकता प्रदान करती हैं।

मॉरिशस की स्वतंत्रता के बाद पहला सामूहिक कहानी-संकलन मॉरिशस के 'हिंदी लेखक संघ' ने सन् 1976 में सुरक्षित उद्यान शीर्षक से प्रकाशित किया। इसके अब तक (1999 तक) 95 अंक प्रकाशित हो चुके हैं। 'बसंत'

Scanned with CamScanner

मॉरिशस की एक मात्र ऐसी पत्रिका है, जो 22 वें वर्ष में चल रही है तथा जिसने दो सौ से अधिक स्थानीय लेखकों की रचनाएं प्रकाशित की हैं। अभिमन्यु अनत इसके लगभग बीस वर्षों तक संपादक रहे। कहानी के क्षेत्र में 'बसंत' पत्रिका के योगदान को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि इसमें अभी तक लगभग 150 कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

राजेंद्र अरूण के संपादकत्व में प्रकाशित कहानी-संकलन मॉरिशस की कहानियाँ (1986) एक सार्थक प्रयास है। सन् 1985 में मॉरिशस में भारतीयों के आगमन की 150वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में यह कहानी संग्रह प्रकाशित किया गया है। इस संकलन की अधिकांश कहानियाँ भारतीयों के अस्तित्व और अस्मिता की चेतना और संघर्ष की कहानियाँ हैं। एक सामूहिक हिंदी कहानी-संकलन 'हिंदी प्रचारिणी सभा' के प्रधान अजामिल माताबदल के संपादकत्व में सुस्मिता शीर्षक से सन् 1995 में प्रकाशित हुआ। मॉरिशस की हिंदी कहानी यात्रा का यह संक्षिप्त सर्वेक्षण हमें उसके लगभग 65-70 वर्षों के इतिहास की एक झलक देता हैं। यह सत्य है कि मॉरिशस की हिंदी कहानी के इतिहास में प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, चतुरसेन शास्त्री, जैनेन्द्र कुमार, अज्ञेय, अश्क, यशपाल, अमृतराय आदि कहानीकारों जैसे सशक्त कहानीकारों की परंपरा नहीं हैं।

मॉरिशस की हिंदी कहानी-यात्रा का आरंभ भारत के प्रवासी हिंदू-समाज में होने वाले जागरण से जुड़ा है। इस पर भारत के कुछ राष्ट्रीय नेताओं तथा साहित्यकारों का भी प्रभाव था। मॉरिशस की हिंदी कहानी में अभिमन्यु अनत के आगमन से एक नये युग का उदय हुआ। इस नये युग के उत्थान के दो कारण हैं, एक मॉरिशस की स्वतंत्रता, दूसरा, अनत के संपादकत्व में 'बसंत' पत्रिका का प्रकाशन। असल में ये दो घटनाएं मॉरिशस के जन-जीवन तथा हिंदी साहित्य के विकास के लिए इतनी महत्वपूर्ण हैं। अभिमन्यु अनत के महात्मा गाँधी संस्थान तथा 'बसंत' के संपादक के पद से सेवा-मुक्त होने के बाद मॉरिशस की हिंदी कहानी का एक नया युग शुरू होता है। इस दौर में रामदेव धुरंधर, जागासिंह, पूजानंद नेमा, भानुमति नागदान, बीवी साहेबा फ़ज़ली, मोहनलाल बृजमोहन, लोचन विदेशी, जय जीऊत, महेश रामजियावन, मुनीश्वरलाल चिंतामणि, बेनीमाधव रामखिलावन, हेमराज सुंदर आदि कहानीकार कहानी-रचना में सक्रिय हैं। भारत और मॉरिशस के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संबंध और भी मजबूत बने और 21वीं सदी में नयी ऊँचाइयों तक पहुँचे।

भारत से लगभग पाँच हजार एक सौ बीस किलोमीटर दूरी पर अफ्रीका महाद्वीप के तट के दक्षिणपूर्व में हिंद महासागर में एक सुंदर द्वीप है जिसे मॉरिशस

सृजनात्मक शाही मॉरिशस देश कहते हैं। मार्क ट्वेन ने तो अपने निजी यात्रा वृतांत 'फ़्लाइंग द एक्केटर' में लिखा है कि 'मॉरिशस को देखकर मन में विचार आता है कि पहले मॉरिशस बना और फिर स्वर्ग; जो मॉरिशस की एक नकल मात्र है।' इस देश की जनसंख्या उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार लगभग साढ़े बारह लाख है। यहाँ की अधिकांश जनता भारत, अफ्रीका, फ्रांस, ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया आदि के निवासियों के वंशज हैं। बहुत से लोग मिश्रित जातीय मूल के हैं। मॉरिशस की आधिकारिक भाषा अंग्रेजी है, सबसे व्यापक रूप से देश में मॉरिशियन क्रियोल भाषा बोली जाती है। हिंदी भी एक बड़े वर्ग द्वारा देश में बोली एवं समझी जाती है। मॉरिशस में विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं जिनमें प्रमुख हैं हिंदू धर्म (52 प्रतिशत), ईसाई धर्म (27 प्रतिशत), और इस्लाम धर्म (14.4 प्रतिशत)। सभी प्रवासी भारतीय सामाजिक अवसरों पर आपस में हिंदी में बोलते हैं। ये प्रवासी भारतीय अपने बच्चों को हिंदी सीखाना चाहते हैं जिससे भारत तथा भारतीयता के प्रति उनका लगाव बराबर बना रहे। यहीं कारण है कि विश्व में हिंदी बोलने वालों और हिंदी के चाहने वालों की संख्या में निरंतर वृद्धि देखी जा रही है। वे सामुदायिक अवसरों पर अपनी हिंदी का ही प्रयोग करते हैं, ये भारतीय हमारी तरह ही व्रत, उत्सव मनाते हैं, सत्यनारायण की कथा सुनते हैं और तुलसी कृत 'रामचरितमानस' पर अटूट विश्वास रखते हैं, हनुमान और शिव की पूजा करते हैं और यहाँ तक की अपने देश को रामकथा के पात्र मारीच से जोड़कर मॉरिशस को मरीच देश कहते है। 1968 में मॉरिशस स्वतंत्र हुआ, देश में भारतीयों की स्थिति सुदृढ़ हुई और हिंदी के विकास ने भी नया जोर पकड़ा।

महात्मा गाँधी की सन् 1901 में मॉरिशस यात्रा से भारतीयों के मन में अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति और सम्मान बढ़ा। शर्तबंद मजदूरों की दयनीय दशा देखकर दुखी महात्मा गाँधी ने बैरिस्टर मणिलाल डॉक्टर को मॉरिशस जाने के लिए प्रेरित किया। डॉ. मणिलाल 1907 में मॉरिशस भेजा। डॉ. मणिलाल एक वकील, लेखक तथा पत्रकार थे। भारतीयों की स्थिति को देखकर उन्होंने एक समाचार पत्र निकालने का मन बनाया जिसके माध्यम से सारे भारतीय संगठित हो सके। सन् 1909 में उन्होंने भारत से छापाखाना मंगवाकर 15 मार्च 1909 में हिंदुस्तानी पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया। इसी हिंदुस्तानी पत्रिका ने मॉरिशस में सर्जनात्मक हिंदी लेखन की नींव डाली। मॉरिशस में हिंदी की प्रथम रचना हिंदुस्तानी पत्रिका के 2 मार्च 1913 के अंक में प्रकाशित 'होली' शीर्षक कविता और 'सत्य होली' शीर्षक लेख ही मॉरिशस की सबसे पहली हिंदी की प्रकाशित साहित्यिक रचनाएं हैं।

Scanned with CamScanner

भारत से बहुत दूर सात समुद्र पार एक छोटा सा भारत, जहाँ हमारी तरह ही सभी देशवासी हिंदी समझते और बोलते हैं, हमारी तरह ही दीवाली और होली मानते हैं, सत्यनारायण की कथा सुनते हैं। रामचरितमानस और हनुमान चालीसा पढ़ते हैं और रामचरितमानस को 'रामायण महरानी' कहकर नित्यप्रति उसकी पूजा करते हैं। दिनभर फीजी रेड़ियो भारतीय संगीत के कार्यक्रम प्रसारित करता है, नई से नई हिंदी फिल्में लोग देखते हैं। वह देश प्रशांत महासागर की गोद में बसा फीजी देश है।

फीजी अनेक द्वीपों का समूह है जिसमें लगभग 300 द्वीप हैं,। फीजी के पश्चिम में वनुवातू तथा उत्तर में तुआलू आदि छोटे-छोटे देश हैं। ये सभी देश संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य हैं और अपना-अपना राजनीतिक महत्व रखते हैं। फीजी में भारतीय जो सामान्यत: उत्तर प्रदेश के वासी सुल्तानपुर, लखनऊ, गोंड़ा आदि जिलों से थे। वे हिंदी भाषा-भाषी थे। आज फीजी में बसे भारतीयों का प्रतिशत 47 है, मूल निवासियों का प्रतिशत 50 तथा अन्य जाति के लोगों का प्रतिशत 3 है।

फीजी में भारतीयों की बोलचाल की भाषा हिंदी है जो उनके द्वारा विकसित हिंदी की एक नई शैली है जिसे वे 'फीजी बात' या 'फीजी हिंदी' कहते हैं। जिसमें भोजपुरी और खड़ीबोली के शब्दों के साथ कई बीती भाषा के अनेक शब्द हैं। फीजी का समस्त भारतीय समुदाय ही नहीं, फीजी के मूल निवासी भी इस हिंदी को अच्छी तरह समझते और बोलते हैं तथा हिंदी यह विदेशी भाषिक शैली एक संपर्क भाषा के रूप में फीजी में प्रयोग में आती है। हिंदी में वे कविताएँ लिखते हैं, कहानियाँ लिखते हैं। आप उनकी इन रचनाओं का रसास्वादन या तो साहित्यिक गोष्ठियों में कर सकते हैं या फीजी की पत्र-पत्रिकाओं में। भारत से हजारों मील दूर इस देश में हिंदी की व्यापकता तथा उसके प्रति भारतीयों में सम्मान और निष्ठा की भावना को देखकर ही जाना जा सकता था। फीजी में हिंदी की स्थिति को दृष्टि में रखते हुए, हिंदी के विविध पक्षों पर अनुसंधानपरक लेख लिखने प्रारंभ किए जो भारत की विभिन्न शोध -पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे।

2004 में नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय, नई दिल्ली के निदेशक प्रख्यात इतिहासकार प्रो. ओम प्रकाश केजरीवाल ने यह संकल्प लिया कि अपने कार्यकाल में वे प्रतिवर्ष राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी की विचार-गोष्ठी का आयोजन करेंगे, जिसमें हिंदी से संबंधित चुने हुए मुद्दों पर देश और विदेश के विद्वान विचार-विमर्श करेंगे। उन्होंने प्रतिवर्ष चार वर्षों तक वे वहाँ निदेशक रहे,

भारत में हिंदी को लेकर अखिल भारतीय दो दिवसीय गोष्ठियाँ करवाई और चौथी त्रिदिवसीय अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी के लिए उन्होंने विषय चुना-विदेश में हिंदी: स्थिति और संभावनाएं। फीजी से प्रो. सब्रमणी आमंत्रित किए गए 2005 में देश की राष्ट्रीय संस्था 'साहित्य अकादमी, नई दिल्ली' ने अपनी स्थापना की स्वर्ण जयन्ती पर प्रवासी भारतीय हिंदी लेखन को लेकर तीन दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का रवींद्र सभागार में आयोजन किया जिसमें इंग्लैंड, अमेरिका, कनाड़ा आदि देशों के साथ विश्व के अनेक देशों में बसे हुए प्रवासी भारतीयों के साहित्य, विशेषकर हिंदी साहित्य पर विस्तृत और गंभीर चर्चा हुई। प्रवासी भारतीयों में हिंदी को जब हम विश्व मंच पर प्रतिष्ठित करने की बात सोचते हैं, तो पहली समस्या रचनाओं के संग्रह की थी। फीजी के बहुत कम रचनाकार ऐसे हैं जिनकी रचनाएँ पुस्तको में प्रकाशित हुई। प्रकाशन की सुविधा न होने से वहाँ के महान कवि पं. कमला प्रसाद मिश्र की रचनाओं का पुस्तककार प्रकाशन भी संभव नहीं हो सका। केवल जोगिंद्र सिंह कँवल और उनकी पत्नी अमरजीत कौर की कृतियाँ डायमंड पब्लिकेशन कंपनी से दिल्ली में छपीं। ज्ञानीदास जिनका फीजी में अपना 'तार प्रेस' था, उन्होंने अपनी रचनाओं, गुप्त शक्तियाँ, फीजी गल्पिका आदि छोटी-छोटी पुस्तकों का प्रकाशन किया। बहुत से लेखक और कवि अपनी रचनाएं साहित्यिक गोष्ठियों में पढ़ते।

भारतेंदु हरिशचंद्र ने बनारस से 'कवि वचन सुधा' और 'हरिश्चंद्र मैगजीन' निकाली, प्रताप नारायण मिश्र ने कानपुर से 'ब्राहमण' पत्रिका निकाली, चौधरी बद्रीनारायण 'प्रेमघन' ने मिर्जा पुर से 'नागरी-नीरद' और बालकृष्ण भट्ट ने इलाहाबाद से 'हिंदी प्रदीप' का प्रकाशन किया।। इन चारों के प्रयत्नों से अनेक हिंदी लेखकों को लिखने का प्रोत्साहन मिला और उनकी रचनाएँ इन पत्रिकाओं के माध्यम से पाठकों तक पहुँच सकी। डॉ. मणिलाल ने 1913 में ही 'द सेटलर' अंग्रेजी पत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया और शीघ्र ही पं. शिवराम शर्मा की देखरेख में उसका हिंदी संस्करण भी निकलने लगा था, जो अंग्रेजी न जानने वाले भारतीयों को जोड़ने वाला तथा उनमें जागृति लाने का प्रयत्न था।

फीजी टाइम्स एंड हेरेल्ड नामक ब्रिटिश संस्था ने 11 मई 1935 में शांतिदूत साप्ताहिक समाचार पत्र का प्रकाशन पं. गुरुदयाल शर्मा के नेतृत्व में किया। उनके संपादन में शांतिदूत एक देशव्यापी प्रतिष्ठित हिंदी पत्र बन गया,जो आज अपने प्रकाशन की 75 वीं जयन्ती मना रहा है। 20 वीं शताब्दी के चौथे दशक में बी.डी. लक्ष्मण ने किसान, ज्ञानीदास ने ज्ञान तथा तारा, काशीराम कुमुद ने प्रवासिनीं, रामखेलावन ने प्रकाश पत्रिकाओं का संपादन प्रकाशन किया। पं.

Scanned with CamScanner

कमला प्रसाद मिश्र ने जय फीजी हिंदी साप्ताहिक का 1956 में पहला अंक प्रकाशित किया। 1958 में जागृति साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया। इन पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिंदी के लेखकों की अपनी रचनाएँ प्रकाशत हुई और उनकी रचनाओं से फीजी ही नहीं वरन् आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड तथा फीजी के आसपास के अनेक देशों में बसे हिंदी भाषी भारतीयों का साहित्यिक रचनाएँ पढ़ने और रसास्वादन करने का अवसर मिला।

फीजी के हिंदी साहित्य को हम दो वर्गों में बाँटकर देख सकते हैं। पहले वर्ग का साहित्य वह है जो वहाँ के भारतीयों की अपनी सहज बोलचाल की हिंदी में है, जो फीजी के 90 प्रतिशत भारतीयों के जन व्यवहार की भाषा है। दूसरा वर्ग हिंदी के उस रूप का है जिसे हम परिनिष्ठित या मानक हिंदी की संज्ञा देते हैं। परिनिष्ठित हिंदी में लिखा हुआ हिंदी साहित्य उन भारतीयों का है जिनका जन्म भारत में हुआ है या जिनकी प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा भारत में हिंदी में हुई है या उन भारतीयों का है जो भारत सरकार की छात्रवृति पर अध्ययन के निमित्त नियत अवधि के लिए भारत आए हैं और उन्होंने यहाँ हिंदी का अध्ययन किया या उन भारतीयों का हैं जो पिछले पचास साल में व्यापार के निमित्त फीजी आए और वहाँ बस गए। संयोग है कि फीजी हिंदी के कई लेखक ऐसे भी थे जो शिक्षा के लिए भारत तो नहीं गए थे पर वे अशिक्षित नहीं थे। वे आस्ट्रेलिया, न्यूजलैंड, अमेरिका और कनाडा जैसे देशों में उच्च शिक्षा प्राप्त कर फीजी लौटे थे और फीजी में विकसित हिंदी में रचना करना इसलिए अधिक पसंद करते कि इसी हिंदी पर उनका अधिकार था। प्रो. सुब्रमणी, प्रो. ब्रजविलास लाल, प्रो. रेमण्ड पिल्लई आदि ऐसे अनेक लेखक हैं जिन्होंने फीजी हिंदी में उपन्यास, नाटक लिखकर देशव्यापी यश अर्जित किया है। प्रो. सुब्रमणी को तो उनके उपन्यास 'डउका पुरान' जो फीजी हिंदी में लिखा गया बृहत उपन्यास है, पर भारत सरकार ने सूरीनाम में हुए 'विश्व हिंदी सम्मेलन' में राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित भी किया।

फीजी के सृजनात्मक हिंदी साहित्य का इतिहास लगभग सवा सौ वर्षों का है और यह भारतीयों के फीजी आगमन, उनके संघर्ष और विकास का दस्तावेज कहा जा सकता हैं। फीजी के सृजनात्मक हिंदी का साहित्य को हम तीन काल खंड़ों में बाँटकर देख सकते हैं। पहला काल खंड़ 1879 ई. से 1920 ई. का है। 1879 का वर्ष फीजी में भारतीयों के पदार्पण का वर्ष है। भारतीय मजदूरों की पहली खेप इसी वर्ष फीजी पहुँची थी। 1916 तक भारतीयों के फीजी आने का सिलसिला चलता रहा। इस प्रकार 1879 का वर्ष तथा 1920 का वर्ष दोनों ही फीजी में बसे हुए भारतीयों के लिए महत्वपूर्ण वर्ष है। इस चालीस वर्ष की

अवधि में इन प्रवासी भारतीयों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति लोकगीतों में हुई, जो साहित्यिक दृष्टि से उत्तम अभिव्यक्तियां तो हैं, मानव चाहे धनी हो या निर्धन, शिक्षित हो या निरक्षर, वह अभिव्यक्ति चाहता है। अपने सुख-दुख को मानव बाँटना चाहता है। कहा जाता है सुख बाँटने से बढ़ता है और दुख बाँटने से घटता है। भारतीय रोज दिनभर के श्रम के बाद सब साथ बैठते, आपस में सुख-दुख बाँटते और अपने साथ जो वह रामचरितमानस की पोथी ले गए थे उसको नियमित रूप से उच्चरित करते।

फीजी के हिंदी साहित्य का दूसरा काल खंड 1921-1980 कहा जा सकता है। अब साहित्य में निराशा और क्षोभ के स्थान पर उत्साह और उल्लास भी दिखाई देने लगा। भारतीयों ने फीजी को अपना नया देश स्वीकार कर लिया। 1970 में फीजी, ब्रिटिश शासन से मुक्त हो स्वाधीन राष्ट्र बना। 1979 में शर्तबंदी प्रथा के अंतर्गत आए भारतीयों ने अपने फीजी आगमन के सौ वर्ष पूरे किए और शताब्दी वर्ष विजय वर्ष के रूप में मनाया। वहीं इन वर्षो में सृजनात्मक हिंदी साहित्य के क्षेत्र में भी विशेष प्रगति हुई और अनेक उत्तम रचनाएँ पाठकों को मिली। अब भारतीयों ने संगठित होकर रहने और एक-दूसरे से जुड़े रहने के लिए हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ निकालनी आरंभ की। जागृति, फीजी समाचार, जय फीजी, वृद्धि, वृद्धिवाणी आदि अनेक हिंदी समाचार-पत्र निकले। अंग्रेज कंपनी फीजी टाइम्स ने फीजी टाइम्स के हिंदी संस्करण निकालने की बात सोची और 1935 में शांतिदूत साप्ताहिक पत्र पं. गुरूदयाल शर्मा के संपादन में निकालना प्रारंभ किया। विशाल स्तर पर फीजी के विभिन्न विद्यालयों में हिंदी भाषा और साहित्य का शिक्षण भी प्रारंभ हुआ और हिंदी को फीजी की प्रधान भाषा के रूप में सरकारी मान्यता भी मिली। यह समय फीजी के भारतीयों के लिए नव-निर्माण का समय है। यही कारण है कि फीजी का हर प्रवासी भारतीय अपनी भाषा हिंदी के प्रति एक सम्मान का भाव रखता है।

फीजी के साहित्यिक इतिहास का तीसरा काल खंड 1980 से प्रारंभ होता है। देश में भारतीय अलग-अलग भाषाओं के बोलने वाले थे, किन्तु हिंदी सभी समझते और बोलते थे। हिंदी इस प्रकार समस्त भारतीयों को जोड़ने वाली भाषा फीजी में बन गई थी। 1986 में भारतीयों ने राष्ट्रव्यापी स्तर पर हिंदी दिवस का आयोजन किया, जिससे संपूर्ण देश को भारतीयों के संगठित स्वरूप का परिचय मिला। फीजी के सृजनात्मक हिंदी साहित्य का मूल्यांकन करते हुए हिंदी के वैश्विक स्वरूप को ध्यान में रखना होगा। हिंदी आज केवल भारत की ही भाषा नहीं है, वह विदेश में बसे हुए दो करोड़ से अधिक भारतीयों की संपर्क भाषा भी है।

Scanned with CamScanner